शोध मंथन Vol. XIV No.I Jan.-Mar.2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

समकालीन मूर्तिकला का अन्य माध्यमों से तुलनात्मक अध्ययन

डॉ० मनोज कुमार
ईमेलः *manojgbss0@gmail.com*

प्राप्तिः 11.01.2023
स्वीकृतः 15.03.2023

3

सारांश

कोई भी कला अपनी रचना–प्रक्रिया में अन्य कला–माध्यमों से भी कुछ–न–कुछ अवश्य ही ग्रहण करती है। कला माध्यमों का अन्तर्सम्बन्ध बहुत प्राचीन रहा है। राजा वज्र विश्णु धर्मोत्तरपुराण में एक मन्दिर बनाना चाहते हैं, एक इमारत बनाना चाहते हैं, उसमें देव प्रतिमा की स्थापना करना चाहते हैं यानी एक शिल्प बनाना चाहते हैं। करते हैं वह विष्णुधर्मोत्तर पुराण में विस्तार से बताते है। इस पुराण में कलाओं की चर्चा है और इसे कलाओं के मूलभूत ग्रन्थों में माना जाता है। मार्कण्डेय कहते हैं, जो आतोद्य (यानि वाद्य) को नहीं जानता उसके लिए नृत्य को समझना बड़ा कठिन है क्योंकि आतोद्य के बिना नृत्य हो ही नहीं सकता।' इस पर राजा फिर कहते हैं, 'हे धर्मज्ञ, आतोद्य को अच्छी तरह जान लेने पर ही नृत्य जाना जा सकता है तो पहले मुझे आतोद्य समझाइये, फिर नृत्यशास्त्र समझाइयेगा।' मार्कण्डेय इसके जवाब में कहते हैं, 'हे अच्युत, गीत के बिना आतोद्य को नहीं समझा जा सकता, गीतशास्त्री के विधान को जानने वाला विधिपूर्वक सब कुछ जान लेता है।' इसके बाद मार्कण्डेय गीतशास्त्र का प्रतिपादन करने के उद्देश्य से भाषा और काव्य का और काव्य के अन्तर्गत नाट्यरूपों का और फिर क्रम से गीत, आतोद्य (वाद्य), नृत्य, चित्र और प्रतिमाशास्त्र का प्रतिपादन करते हैं।

मुख्य बिन्दु

चित्रकला, मूर्तिकला, समकालीन, त्रिआयामी, कैनवास, गतिशीलता।

इस क्रम में अपने कलाकारों ने आपसी रिश्ते को और प्रगाढ़ किया है। इससे यह प्रमाणित होता है कि कला माध्यमों के बीच आपसी अर्न्तसम्बन्ध न केवल अटूट है बल्कि उनमें अपने को लगातार नवीन करने की क्षमता भी है। कला माध्यमों के अन्तर्सम्बन्ध के संवाद में कई बार चित्रकारों ने त्रिआयाम में रचना की और मूर्तिकार ने दो आयाम में रचना की। इस प्रकार हम पाते हैं कि मूर्तिकला का अन्य माध्यमों से घनिष्ठ सम्बन्ध बना रहता है। इसे और स्पष्ट कर देखा जाए तो लगता है कि जिन माध्यमों में कलाकार रचना कर रहे हैं वहीं अंतिम सत्य नहीं है। इसके अलावा भी दूसरी अन्य कलाएँ हैं जिसमें रचने–बसने की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। इसी साहचर्य से कलाएँ समृद्ध होती गयी हैं।[1]

बहुत से ऐसे भी कलाकार हैं जो चित्र के किसी आकार को त्रिआयाम में आकार देते हैं उसे सतही तौर पर लिया जाता है। चित्र के किसी आकार को मूर्ति में गढ़ दिया, यह अतर्सम्बन्ध नहीं है। इससे दोनों माध्यमों का कोई विकास नहीं होगा। आप एक कला रच रहे हैं तो दूसरी कला के सरोकार उसमें कुछ इस तरह से आएँ कि कलाकृति एक ही हो पर उसमें दूसरी कला माध्यम का आस्वादन स्वतः ही हो।[2]

जब अन्य माध्यमों से मूर्तिकला की तुलना की बात करते हैं तो भारतीय परिप्रेक्ष्य में हमें कला के अपने समृद्ध इतिहास पर भी एक नजर डालने की जरूरत है। कला का हमारा जो इतिहास है, उसमें कलाएँ कभी एकांगी नही रहीं हैं। चित्र है तो उसमें संगीत है, नृत्य है, नाट्य है, शिल्प है और ये सभी मिलकर ही कला को सर्वांगी बनाते हैं। आज संस्थापन के जरिए जो कुछ किया जा रहा है, उसमें कलाकार कला का विस्तार ही तो करता है। वह वीडियो, परफार्मेंस, डिजिटल चित्र और ध्वनि का प्रभाव लाता है। इन सबके जरिए वह अन्य अन्तर्मन की संवेदनाओं, अनुभवों का आभास करता है।[3]

(क) मूर्तिकला एवं चित्रकला

मूर्तिकला प्रत्येक अवस्था में त्रिआयामी ही रहती है जबकि चित्रकला द्विआयाम में त्रिआयाम का आभास कराती है। अतः मूर्तिकला और चित्रकला के संयोजन में रचना में भिन्नता आ जाती है। चित्रकला में कैनवास (फलक) का आकार सीमित होता है पर मूर्तिकला में चित्रकला की अपेक्षा आकार का अवकाश में विस्तार होता है, फिर भी एक स्तर के बाद मूर्तिकला के साथ आकार सीमित होता है।

चित्रण में रेखाएँ अपना वैशिष्ट्य लिए रहती हैं और समय के साथ उनमें प्रभाव और मायने बदलते हैं। दर्शक की दृष्टि और चित्रफलक के मध्य एक वातावरण बनाता है और परत दर परत लगे रंगीलेपन, छोटी–मोटी बारीक एवं गतिमय रेखाओं के उलझाव से फलक को सम्पूर्ण कर लेता है। क्षैतिजवत रेखाएँ एक सतह रचती हैं जिससे चित्र फलक पर एक अभासी गहराई और रहस्य उत्पन्न होता है। रेखाओं के साथ रंगीलेपन से रचे गए आकार में एक ऐसा प्रभाव उत्पन्न होता है जिसके सहारे दृष्टि सम्पूर्ण फलक पर विचरण करती है जहाँ रंग, रेखाओं एवं प्रतीकों का विशेष निजत्व होती है। आशय के अनुसार रंगों का परिणाम कम–ज्यादा होता रहता है। आशय के अनुरूप ऐसे रंगों की सघनता, चटकता, गतिशीलता, बेधकता, गहराई जैसे गुणों का समुचित उपयोग करके, विविध रंगों का सम्मिश्रण करके कोई चित्रकार स्वर्णिम अनुभव का संसार रच सकता है। तो कभी किसी चित्र के रंगों का रंगपन कम करके–यानी सभी रंगों को ज्यादा गाढ़ा या हल्का करके एक तरह से रंगों से पेर जाने या उनके समान सूत्रों को संगुफित करके रंगों की सजातीय एकरूपता खोजने की कोशिश भी चित्रकार करता है।

चित्रकला की मूल भिति रेखा और रंग है जो आकारों में प्राण डालती है। चित्रकला की अपनी रंग–युक्ति, रंग संगति, अपनी तकनीक परम्परा और संस्कृति होती है। रचते समय रंगों और रेखाओं में रचनाकार को अदृश्य सच की तलाश करनी होती है। कलाकार जब किसी चित्र को फलक पर रच रहा होता है तो वह अपने समय और संवेदना को बुन रहा होता है। चित्रकला लघु फलक पर भी किसी विचार अथवा घटना को शीघ्रता से वर्णित करने की क्षमता रखती है, उसमें रंग और रेखाओं के उजास से माधुर्य बनाया जा सकता है।

एक चित्रकार हमेशा रंगों के मूल मर्म तलाशता है– रंग–जल की तरह पारदर्शिता में, एक ही रंग के क्रमशः गहरे–फीके होते जाने के घटित में, शुद्ध रंग के आवर्त्तन में, अनेक रंगों के एकत्रीकरण और सान्निध्य में, रंग–कणों में, उनके बिखरे पुंज में और रंगों की मोटी सतहों आदि में। और उसे रंगों के पार भी जाना होता है–रंगों के अनेक विक्रमों से, विस्मयकारक मिश्रणों से, रंग की एक बूँद से, रंग–किरणों से, उसके अधूरे अंगलों से। फिर उसे रंगों के अन्तरंग को भी पहचाना होता है; क्योंकि उसी में उसके चित्र का आन्तरिक स्वरूप निहित होता है। मुझे लगता है कि रंगों का मर्म उनके दृश्य रूप में ही नहीं, अदृश्य रूप में भी यानी चित्र की पूर्ण एकरूपता में होता है।[4]

तात्पर्य यह है कि सिर्फ विवेचन की सुविधा के लिए आकार और रंग का हम अलग–अलग विचार कर रहे हैं, वरना वस्तुतः वे एक दूसरे से अलग नहीं है; क्योंकि इस दुनिया में प्रत्येक आकार का रंग होता है और प्रत्येक रंग का कोई न कोई आकार तो है ही। बल्कि इसी दिशा में आगे बढ़ने पर मालूम होगा कि आकार, रंग और अवकाश–तीनों ही घटक एक दूसरे से अलग नहीं हैं। मूलतः वे एक ही हैं। जैसे एक ही मन की दो अवस्थाएँ है– विद्या और अविद्या (ज्ञान और अज्ञान), उसी तरह एक ही अवकाश के दो रूप है, आकार रंग। इसे यूँ भी कह सकते हैं कि जैसे भावना और विचार एक मन से उद्धृत होते हैं, उसी तरह रंग और आकार एक ही अवकाश से निर्मिण होते हैं।[5]

(ख) मूर्तिकला एवं वीडियो आर्ट

भारतीय समकालीन में संस्थान कला के साथ–साथ वीडियो आर्ट का भी प्रादुर्भाव हुआ माना जाता है इसकी शुरूआत अस्सी के दशक से मानी जा सकती है; क्योंकि उसी समय भारत में रंगीन टेलीविजन आया था। एशियाड होने वाला था। नए–नए इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के साथ हम रू–ब–रू होना शुरू हो गए थे। परन्तु पश्चिमी देशों में साठ के दशक में वीडियो आर्ट पर कार्य होने लगा था।[6] आधुनिक मूर्तिकला का प्रारम्भ भारत में रामकिंकर बैज से माना जाता है। इसने अपनी आधुनिकता के अनुरूप ढलने में काफी समय लिया।

यह माध्यम कहीं न कहीं से व्यक्तिगत अनुभवों को उनके बृहत्तर सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में सार्वजनकि रूप से अभिव्यक्त करने में ज्यादा सक्षम है। वीडियो आर्ट की एक बड़ी सीमा यह है कि यह केवल कलाकारों व कुछ दर्शकों की कला है। आम जीवन और जन सरोकारों से जुड़े होने के बावजूद यह सम्भ्रांत वर्ग की ही कला है। इस तरह से यह एक अल्प लोकप्रिय कला माध्यम है जिसके दर्शक नहीं हैं, यह भारतीय वीडियो आर्ट की कड़वी सच्चाई भी है।[7] डिजीटल और कम्प्यूटरीकरण के कारण वीडियो सम्पादन में बड़ी सुविधा हो गयी है।

मूर्तिकला को गढ़ने के लिए प्रत्यक्ष रूप से रचनाकार द्वारा हाथों के साथ कुछ उपादानों की मदद ली जाती है, माध्यमों में भी अधिक वैविध्यता दिखाई देती है। जैसे धातु, लकड़ी, प्रस्तर आदि को ढाल कर तथा कुछ को तरास कर कुछ में उभार प्रदान कर रूप विन्यास किया जाता है जब कि वीडियो में उतल और अवतल लेन्स के सहारे जीवन्त गत्यात्मक रूपक को फ्रेम में पिरोते–पिरोते पूरा करते हैं।

वीडियो आर्ट के अंतर्गत कलाकार के लिए यह आसानी हो गयी है कि वह संसार भर की तमाम परम्पराओं को जीवित धरोहर के रूप में स्थापित कर सकता है। उसके कला आयाम से दर्शकों को रू–ब–रू करा सकता है, बशर्ते कि सब कुछ प्रयोग के रूप में ही नहीं हो। ऐसे बहुत से कलाकार

हैं जो वीडियो आर्ट में अच्छा काम कर रहे हैं। जरूरी नहीं है कि वीडियो के अंतर्गत उन सब में तकनीकी दक्षता हो ही परन्तु वह तकनीक की संवेदनाशीलता को समझते हैं, उसके द्वारा अपने विचारों के मौलिक सोच को संप्रेषित करना जानते हैं। उनके पास अपने विचार हैं, अपनी वह सोच है जिससे अपनी अर्न्तमन संवेदनाओं को तकनीकी दक्षता के द्वारा और बेहतर तरीके से दर्शक तक पहुँचाया जा सकता है।[8]

प्रेक्षक तथा मूर्ति एक ही धरातल पर होते हैं उसमें रूपाकार की स्पष्टता और स्पर्शनीय भागीदारी की जा सकती है। वीडियो का मूल आधार है जीवन्तता को फ्रेम में पिरोना, जो उसमें प्राण डालती है इसकी अपनी रंग–युक्ति, तकनीक परम्परा और संस्कृति की व्याप्ति होती है। रचते समय रचनाकार लेन्स के माध्यम से उस सच की तलाश करते–करते वीडियो को सम्पूर्ण कर लेता हैं। जिसमें वह अपने समय अथवा घटना को शीघ्रता से वर्णित करने की क्षमता रखता है। इसमें रंग, आवाज, गति और प्रकाश के उजास से माधुर्य बनाया जा सकता है। मूर्ति की तुलना में वीडियो अधिक अन्तर्गतिमयी और शीघ्र सम्प्रेषण की अपेक्षा रखी जा सकती है क्योंकि मूर्ति स्थूल स्थिर है, जबकि वीडियो जीवन्त की तरह गत्यात्मकता का आभास देता है।[9]

(ग) मूर्तिकला एवं इंस्टॉलेशन (संस्थापन कला)

यह मान्य तथ्य है कि संस्थापन एवं मूर्तिकला के बीच सम्बन्ध बहुत पारदर्शी है। सतीश गुजराल सरीखे कलाकार का मानना है कि भारतीय प्रसंग के अन्तर्गत विभाजन पूर्णतया सत्याभासी है। वह इसकी उत्पति युद्धोत्तर यूरोप के लड़खड़ाये बाजार में देखते हैं, जहाँ दीर्घाएँ बन्द हो चुकी थीं एवं कलाकारों के लिए जाने की कहीं कोई जगह नहीं थी। अनेक कलाकारों ने प्रक्षेपण का दूसरा तरीका अपना लिया, वे नमूनों का निर्माण करने लगे। फलस्वरूप, संस्थापन कला वजूद में आयी।

संस्थापन कला बीसवीं सदी में एक नवीन कला के साथ कलाकारों के लिए, सभी कलाओं को एक मंच पर लाने का प्रयास कह सकते हैं जिसमें कई कला विधाओं का एक साथ संयुक्तीकरण पाते हैं। वहीं मूर्तिकला एक पांरम्परिक कला विधा है और इसमें माध्यमन और अभिव्यक्ति के स्तर पर सीमाएँ भी हैं। माध्यमों को गढ़ने की अपनी पारम्परिक संस्कृति और पारम्परिक उपादन के साथ–साथ मानक भी उसके साथ यात्रा करते हैं।

जीवन और कला की परिधियों को स्पष्ट रूप से अलग न करके एक दूसरे के सानिध्य में लाया जाता है। इन रचनाओं में कला और जीवन के बीच के भेद को स्पष्ट नहीं रखा जाता। जीवन के कार्यों का कलात्मक संयोजन किया गया है या वास्तविक जीवन क्षेत्र में कलात्मकता की संम्भावनाओं को उभारा गया है। जब कि मूर्तिकला और जीवन के बीच भेद स्पष्ट है मूर्तिकला का सौन्दर्य निर्पेक्ष होता है सौन्दर्य का मानक तय निर्धारित होता है। जिसके कसौटी पर कला समीक्षक मूर्तिकला की श्रेष्ठता को स्थापित करते है।[10]

मूर्तिकला में रचना सामग्री के स्थायित्व पर बल दिया जाता हैं कि अमुक माध्यम में निर्मित कलाकृति चिरकाल तक अस्तित्व में विराजमान रहेंगे पर अब इस विचार में परिवर्तन होने लगा है। इस विषय पर कई बार चर्चा भी हुई, कलाकृतियों के अस्थायित्व को लेकर प्रश्न चिह्न भी लगे हैं। पर कला कहीं ठहरने वाली है कहाँ। यह तो बहती नदी की चंचल धारा की तरह है जब भी उसे

विशुद्ध रूप में पकड़ने की कोशिश की जाती है तो हाथ कुछ भी नहीं लगता और आगे बढ़ते हुए, आग, पानी, बर्फ, प्रकाश, गन्ध और भी कई अल्पायु वाली सामग्री को रचनाकार की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में अपनाने लगी है। बाला सुब्रमण्यन ने हाल में ही एक पोट्रेट को प्रदर्शित किया जो प्रदर्शन के दौरान धीरे–धीरे हवा के सम्पर्क में आने से क्षय हो कर अपना स्वरूप बदलता चला गया और अन्त में कुछ भी नहीं रहा।[11]

(घ) मूर्तिकला एवं इन्टरेक्टिव आर्ट

इन्टरेक्टिव आर्ट और मूर्तिकला में तुलना करते हैं तो हम देखते हैं कि कई स्तरों पर दोनों साम्य हैं तो कई स्तर पर एक दूसरे के विपरीत भी हैं। मूर्तिकला का उद्‌भव एवं विकास पारम्परिक स्वरूप में हुआ जब कि इन्टरेक्टिव आर्ट का उद्‌भव संस्थापन कला से माना जा सकता है क्योंकि संस्थापन से एक स्तर पर यह अपने को विभक्त कर लेता है। यह कला में व्यावसायिकता के विरूद्ध, प्रदर्शन के पश्चात नष्ट किये जाने वाली सामग्री से रचा गया होता है।

मूर्तिकला की प्रवृत्ति त्रिआयामी है जिसमें दर्शक और मूर्ति के बीच एक अन्तराल होता है। यही अन्तराल इन्टरेक्टिव आर्ट में अदृश्य हो जाता है। प्रेक्षक उसके हिस्सा बन कर उसके साथ सम्प्रेषण (इन्टरेक्ट) करने लगते हैं। यह (इन्टरेक्शन) कई आयामों में किया जाता है जैसे, प्रश्नावली, कविता, गणितीय, खेल, नाटकीय, नृत्य, श्रोता, वक्ता आदि। यहाँ यह आभास होता है कि यह एक प्रकार से ऐसी अवधारणा है जो रचनाकारों को विभिन्न विधाओं द्वारा नवप्रवर्तनकारी अभिव्यक्ति करने का अवसर प्रदान करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मूर्तिकला से इन्टरेक्टिव आर्ट का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो हम पाते हैं कि इनमें माध्यम के स्तर पर आपसी सहयोग है पर इन्टरेक्टिव आर्ट में कई नवीन माध्यमों जैसे–सेंसर, डिजिटल, इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर और एप्स आदि को समाहित किया गया है। वहीं मूर्तिकला में अपन पारम्परिक माध्यमों के साथ–साथ दैनिक जीवन में उपयोग होने सामग्री का भी इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रकार समकालीन मूर्तिकला में भी नित नये माध्यमों को आत्मसात करने का पूरा प्रयास किया जाता है। इसके फलस्वरूप मूर्तिकला में नवीन आयामों का उद्‌भव होता है।

इन्टरेक्टिव कला में परिणाम पाने के लिए दर्शक को कलाकृति में शामिल करते हैं उनकी प्रतिक्रिया उनके रचनाकर्म का हिस्सा बन जाती है। यह एक प्रकार के मनोवैज्ञानिक कार्यकलाप की तरह है। इसमें प्रेक्षक त्रिआयाम का अनुभव करता है। मूर्तिकला के त्रिआयाम और इन्टरेक्टिव आर्ट के त्रिआयाम में भिन्नता होती है। मूर्तिकला को दर्शक अवलोकन और स्पर्श करता है। पर इन्टरेक्टिव में दर्शक त्रिआयाम के अंश बन जाते हैं। उसके अन्दर और बाहर अवलोकन करता तो है ही और उस कलाकृति के पाठ के अनुरूप अपनी प्रतिक्रिया भी करता है। पर मूर्तिकला में दर्शक की प्रतिक्रिया को समाहित करने का कोई अवसर नहीं होता। इसमें केवल कलाकार की अभिव्यक्ति मात्र होती है। प्रेक्षक को उसके साथ सम्प्रेषण करने का कोई अवसर नहीं होता। अतः इन्टरेक्टिव आर्ट को मूर्तिकला के विस्तार की अगली कड़ी के रूप में देखा जा सकता है जिसका अधिकांश क्षेत्रफल त्रिआयामी होता है, मूर्तिकला से आपसी घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं।[12]

(ङ) मूर्तिकला एवं परफार्मेंस आर्ट

हैपनिंग एक ऐसा कला का प्रकार है जो सोच–समझ कर नियोजन करके जिस प्रकार

घटना घटेगी इसी प्रकार इसको पेश किया जाता है। यह कला–विधा संस्थापन के करीब है। इसका प्रमुख उद्देश्य दर्शकों को शामिल करना होता है। यह आभास होता है कि परफार्मेंस एक आकस्मिक घटना है। यह एक प्रकार से ऐसी अवधारणा है जो रचनाकारों को नव क्रान्तिकारी अभिव्यक्ति करने का अवसर प्रदान करती है।

परफार्मेंस में अन्तराल मूर्तिकला यथार्थ अन्तराल के समान ही होती है। दोनों में त्रिआयाम भी हैं। पर परफार्मेंस में जीवन्तता और गति होती है, जिसके कारण दर्शक को सम्प्रेषित करने की अद्भुत क्षमता होती है। एक ही क्षण में यह सम्बन्धित रचनाकार के भाव पक्ष को गहनता से अपने शरीर द्वारा प्रस्तुत कर देती है जो उसका उद्देश्य होता है। संग्रहालयों के एकाधिकारवादी व्यावसायिक विचार के विरूद्ध अपने शरीर को प्रयोगवादी रूप में प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार यह कहा जा सकता हैं कि व्यावसायिक वातावरण के विरूद्ध में उससे अलग करके एक नई परिभाषा को अपनाया और दृश्य कला के क्षेत्र में एक नया विश्वव्यापी कला आन्दोलन का सूत्रपात हुआ माना जा सकता है। इस प्रकार हम पाते हैं कि मूर्तिकला के विस्तार के बहुत आगे की कड़ी रूप में परफार्मेंस आर्ट का उदभाव हुआ है।

अभिव्यक्ति के स्तर पर मूर्तिकला से परफार्मेंस कला भिन्न होती है और माध्यम के स्तर पर तो दोनों एक दूसरे से दूर–दूर तक विपरीत होते हैं। मूर्तिकला में जहाँ आप आकार को विस्तारित करते हैं वही परफार्मेंस में कला अपने जीवन्त शरीर का माध्यम के रूप में प्रयोग करते हैं। मूर्तिकला में एक तरह से आप माध्यम एवं तकनीक से बंधे होते हैं। वही परफार्मेंस में आप कुछ भी घटित करने के लिए स्वछन्द हैं। अनहोनी होने की पूरी सम्भावना होती है। यह हिन्सक भी हो सकता है। समूह में भी किया जा सकता है। पूर्वनिर्धारित अथवा अनायास भी घटित होता है।

इस प्रकार हम सब मूर्तिकला से परफार्मेंस कला का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि इनमें माध्यमों एवं तकनीकों का कोई रिश्ता ही नहीं है। एक स्थूल है तो दूसरा जीवन्त प्रदर्शन हे। इनके बीच एक ही रिश्ता हो सकता है वह है संवेदनशीलता का। यही संवेदनशीलता भारतीय आधुनिक मूर्तिकारों में पहचान बनाने के बाद फरफार्मेंस फोटो द्वारा रची जाने लगी है। किसी माध्यम में मूर्ति बनाने से सजीव मूर्तिशिल्प की तरफ विस्थापन के लिए पुष्पमाला आन्द्रेई तारकोवस्की की अवधारणा, 'फिल्मस आर स्कलपचर इन टाइम' को श्रेय देती हैं।[13]

सन्दर्भ

1. वाजपेयी, उदयन. (2005). कलाओं का अन्तर्गुम्फन. कलाएँ आस–पास. सम्पा. विनोद भारद्वाज. ललित कला अकादेमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **37–38.**
2. व्यास, डॉ० राजेश कुमार. (2017). कलाओं के अंतः सम्बन्ध भारतीय कला. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः जयपुर. पृष्ठ **61.**
3. वही. पृष्ठ **48.**
4. बर्वे, प्रभाकर. (2015). कला में आकार. अर्थ और भय. समकालीन कला. अंक 46–47. सम्पा० डॉ० ज्योतिश जोशी. ललित कला अकादेमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **44.**
5. वही. पृष्ठ **45.**

6. कुमार, विनय. (2011). न्यू मीडियाः विचार, कला और सच, कला कहाँ है. विजया बुक्सः दिल्ली. पृष्ठ **32.**
7. वही. पृष्ठ **35.**
8. व्यास, डॉ० राजेश कुमार. (2017). भारतीय कला. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमीः जयपुर. पृष्ठ **43.**
9. भारद्वाज, वेद प्रकाश. कलाओं के बीच अव्यक्त सम्बन्ध. कलाएँ आस–पास. सम्पा० विनोद भारद्वाज. ललित कला अकादेमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **100.**
10. सिन्हा, गायत्री. (2010). संस्थापना कला. कला–भारती. खण्ड–दो. सम्पा० पीयूश दईया. ललित कला अकादमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **460.**
11. घोश, डॉ० रंजन. (2000). आज का संदर्भः नई दिशाएँ. नई विधाएँ. समकालीन कला. अंक–18. ललित कला अकादेमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **30–31.**
12. रानडे, दिलीप. संस्थापन. (2010). एक कला–प्रणाली. कला भारती खण्ड–दो. सम्पा० पीयूश दईया. ललित कला अकादेमीः नई दिल्ली. पृष्ठ **480.**
13. कुमार, विनय. (2011). कला कहाँ है. विजय बुक्सः दिल्ली. पृष्ठ **80.**